IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, September 2026
Impact Factor: 8.2

हिंदी साहित्य के भक्तिकालीन कवियों का सामाजिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक योगदान

ज्ञान प्रकाश शर्मा[1] and डॉ. अमन अहमद[2]

[1]शोधार्थी, हिंदी-विभाग

[2]सहायक प्रोफेसर, हिंदी-विभाग

मोनाड fo'ofo|ky;, हापुड (उ०प्र०)

सारांश

प्रस्तुत शोध-पत्र में हिंदी साहित्य के भक्तिकालीन कवियों के सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक योगदान का विश्लेषण किया गया है। भक्तिकाल हिंदी साहित्य के इतिहास का ऐसा महत्त्वपूर्ण चरण है जिसमें भक्ति को केवल धार्मिक साधना न मानकर मानवीय समानता, नैतिकता, प्रेम, करुणा और लोकमंगल से जोड़ा गया। कबीर, रैदास, गुरु नानक, दादू दयाल, तुलसीदास, सूरदास और मीराबाई जैसे कवियों ने अपने काव्य के माध्यम से तत्कालीन समाज की रूढ़ियों, जातिगत ऊँच-नीच, धार्मिक पाखंड और बाह्याचार पर प्रश्न उठाए। निर्गुण संत कवियों ने आंतरिक साधना, श्रम की गरिमा और मानव-मात्र की एकता पर बल दिया, जबकि सगुण भक्त कवियों ने राम और कृष्ण के चरित्रों के माध्यम से आदर्श जीवन, वात्सल्य, प्रेम, लोकमर्यादा तथा सांस्कृतिक स्मृति को समृद्ध किया। इस अध्ययन में ऐतिहासिक-समीक्षात्मक एवं वर्णनात्मक पद्धति अपनाई गई है।

मुख्य संकेतक: भक्तिकाल, निर्गुण भक्ति, सगुण भक्ति, सामाजिक चेतना, लोकभाषा, सांस्कृतिक समन्वय।

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, September 2026
Impact Factor: 8.2

परिचय

हिंदी साहित्य का भक्तिकाल भारतीय साहित्यिक और सांस्कृतिक इतिहास का अत्यंत प्रभावशाली युग माना जाता है। इस काल में कविता का केंद्र दरबारी प्रशंसा और सीमित अभिजन अनुभवों से आगे बढ़कर सामान्य जनजीवन, आध्यात्मिक अनुभव, सामाजिक संबंध और नैतिक प्रश्नों तक विस्तृत हुआ। भक्ति आंदोलन की विविध धाराओं ने ईश्वर के साथ व्यक्ति के सीधे संबंध को महत्त्व दिया तथा साधना के लिए जाति, लिंग, संपत्ति या पांडित्य को अनिवार्य मानने वाली धारणाओं को चुनौती दी। भक्त कवियों ने संस्कृत-केंद्रित धार्मिक विमर्श के साथ-साथ अवधी, ब्रज, सधुक्कड़ी, पंजाबी और अन्य लोकभाषिक रूपों में रचना कर व्यापक समुदायों तक अपनी बात पहुँचाई।

भक्तिकाल को सामान्यतः निर्गुण और सगुण धाराओं में समझा जाता है। निर्गुण धारा में ज्ञानाश्रयी तथा प्रेमाश्रयी प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं; कबीर, रैदास, दादू और गुरु नानक जैसे संतों की वाणी में निराकार ईश्वर, आत्मानुभूति, सामाजिक समानता और धार्मिक उदारता प्रमुख हैं। सगुण धारा में रामभक्ति और कृष्णभक्ति की शाखाएँ विकसित हुईं। तुलसीदास ने रामकथा के माध्यम से मर्यादा, नीति और लोकमंगल का आदर्श प्रस्तुत किया; सूरदास ने कृष्ण-लीला, वात्सल्य और मानवीय भावनाओं का सूक्ष्म चित्रण किया; मीराबाई ने व्यक्तिगत प्रेम और आध्यात्मिक स्वतंत्रता को स्वर दिया। इन कवियों की रचनाएँ अपने समय से संवाद करती हैं और आज भी सामाजिक-सांस्कृतिक विमर्श में प्रासंगिक बनी हुई हैं।

शोध-पद्धति

यह अध्ययन गुणात्मक, वर्णनात्मक और ऐतिहासिक-समीक्षात्मक प्रकृति का है। इसमें भक्तिकालीन कवियों की प्रतिनिधि रचनाओं, साहित्येतिहास संबंधी ग्रंथों तथा आधुनिक आलोचनात्मक अध्ययनों का विषयवस्तु-आधारित विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का आधार द्वितीयक स्रोत हैं; इनमें हिंदी साहित्य के इतिहास, भक्ति आंदोलन, संत साहित्य, रामकाव्य, कृष्णकाव्य और स्त्री-अनुभव से संबंधित पुस्तकें एवं

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 3, September 2026 Impact Factor: 8.2

शोधपरक लेख सम्मिलित हैं। 2010–2023 की संदर्भ-सीमा को ध्यान में रखते हुए आधुनिक विमर्शों जैसे दलित दृष्टि, स्त्रीवादी पुनर्पाठ, लोकभाषा, बहुलतावाद और सामाजिक इतिहास के आलोक में भक्तिकाव्य का मूल्यांकन किया गया है। यह शोध किसी एक कवि या संप्रदाय को संपूर्ण भक्तिकाल का प्रतिनिधि नहीं मानता; विविध परंपराओं और क्षेत्रीय संदर्भों को साथ रखकर निष्कर्ष निकालता है।

भक्तिकाल की ऐतिहासिक एवं वैचारिक पृष्ठभूमि

भक्तिकाल का विकास मध्यकालीन भारतीय समाज की जटिल परिस्थितियों के बीच हुआ। सामाजिक जीवन में जाति-आधारित विभाजन, धार्मिक कर्मकांड, सामंती संबंध और अनेक प्रकार की असमानताएँ विद्यमान थीं। विभिन्न क्षेत्रों में भक्ति की परंपराएँ पहले से सक्रिय थीं; दक्षिण भारत के आलवार और नायनार संतों से लेकर उत्तर भारत के संतों और वैष्णव आचार्यों तक भक्ति ने विविध रूप ग्रहण किए। उत्तर भारत में संत-वाणी, सूफी प्रेमाख्यान, वैष्णव भक्ति और क्षेत्रीय लोकपरंपराओं के बीच संवाद ने एक व्यापक सांस्कृतिक वातावरण निर्मित किया।

भक्तिकाल को एकरूप आंदोलन के रूप में देखना उचित नहीं है। निर्गुण संतों का ईश्वर निराकार और अनुभवगम्य है, जबकि सगुण कवियों ने ईश्वर को राम या कृष्ण के मानवीय एवं लीलात्मक रूपों में चित्रित किया। इन धाराओं में मतभेद होने पर भी प्रेम, समर्पण, नैतिक जीवन, लोकभाषा और व्यापक जनसमुदाय तक पहुँचने की आकांक्षा जैसी समान प्रवृत्तियाँ दिखाई देती हैं। आधुनिक आलोचना ने इस विविधता को रेखांकित करते हुए भक्तिकाल को सामाजिक-सांस्कृतिक संवाद का बहुस्तरीय क्षेत्र माना है।

प्रमुख भक्तिकालीन कवियों का योगदान

1. कबीरदास: सामाजिक समानता और धार्मिक विवेक

कबीरदास की वाणी निर्गुण भक्ति, अनुभव-आधारित ज्ञान और सामाजिक आलोचना का सशक्त उदाहरण है। उन्होंने जाति, पंथ, बाह्याचार, कर्मकांड और धार्मिक अहंकार पर तीखा प्रहार किया। उनके लिए ईश्वर मंदिर-मस्जिद की सीमाओं में बंद नहीं, बल्कि प्रत्येक मनुष्य के भीतर उपस्थित है। 'जाति न पूछो साधु की'

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, September 2026
Impact Factor: 8.2

जैसी लोकप्रचलित अभिव्यक्ति सामाजिक पहचान के बजाय मानवीय गुण और आचरण को महत्त्व देती है। कबीर की भाषा में सधुक्कड़ी, लोकप्रयोग, प्रतीक, उलटबाँसी और व्यंग्य का प्रभावी संयोजन मिलता है। उनकी वाणी ने जनभाषा को दार्शनिक और सामाजिक विमर्श की भाषा बनाया तथा आज भी सांप्रदायिक सद्भाव और विवेकपूर्ण धार्मिकता के लिए प्रेरित करती है।

2. संत रैदास: श्रम की गरिमा और समतामूलक समाज

संत रैदास की वाणी में सामाजिक सम्मान, श्रम की प्रतिष्ठा और भेदभाव-मुक्त समाज की आकांक्षा प्रमुख है। जातिगत अवमानना के अनुभवों के बीच उन्होंने मनुष्य की गरिमा को आध्यात्मिक सत्य से जोड़ा। 'बेगमपुरा' की कल्पना ऐसे समाज का प्रतीक है जहाँ भय, कर, दुख और सामाजिक ऊँच-नीच का स्थान न हो। रैदास का योगदान इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है कि उन्होंने भक्ति को वंचित समुदायों की आत्मप्रतिष्ठा और समानता की चेतना से जोड़ा। उनकी सरल, संप्रेषणीय भाषा ने सामाजिक आदर्श को लोकमानस तक पहुँचाया।

3. गुरु नानक: मानव एकता और सेवा-भाव

गुरु नानक की वाणी में एकेश्वरवाद, नाम-स्मरण, सत्यपूर्ण श्रम, सेवा और साझा मानवीयता का संदेश मिलता है। उन्होंने धार्मिक विभाजन और सामाजिक आडंबरों के स्थान पर नैतिक आचरण तथा मानव-सेवा को महत्त्व दिया। 'किरत करो, नाम जपो और वंड छको' की शिक्षाएँ श्रम, आध्यात्मिक अनुशासन और संसाधनों की साझेदारी का आदर्श प्रस्तुत करती हैं। उनकी वाणी ने पंजाबी सहित उत्तर भारतीय भाषिक-सांस्कृतिक क्षेत्र में लोकाभिमुख आध्यात्मिक साहित्य को समृद्ध किया और सामुदायिक सहभागिता की परंपरा को बल दिया।

4. तुलसीदास: लोकमंगल, मर्यादा और सांस्कृतिक एकता

तुलसीदास ने रामकथा को अवधी भाषा में प्रस्तुत कर उसे व्यापक लोकसमुदाय के निकट पहुँचाया। 'रामचरितमानस' में राम का चरित्र मर्यादा, कर्तव्य, करुणा, नीति और लोककल्याण के आदर्शों से जुड़ा है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 3, September 2026
Impact Factor: 8.2

तुलसी की काव्य-दृष्टि में परिवार, समाज, शासन और धर्म के बीच नैतिक संबंधों की चर्चा मिलती है। उनकी रचना ने कथा, गीत, संवाद और लोकनाट्य की परंपराओं को गहरा प्रभाव दिया। तुलसी साहित्य की आलोचनात्मक समीक्षा में उसके समावेशी लोकमंगल पक्ष के साथ-साथ वर्ण-व्यवस्था और स्त्री-प्रतिनिधित्व से जुड़े विवादास्पद प्रसंगों पर भी विचार आवश्यक है। इस प्रकार तुलसी का मूल्यांकन ऐतिहासिक संदर्भ और आधुनिक समानतावादी दृष्टि दोनों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

5. सूरदास: वात्सल्य, प्रेम और मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता

सूरदास ने कृष्णभक्ति को मानवीय संवेदना और सौंदर्यबोध से समृद्ध किया। बालकृष्ण की लीलाओं के माध्यम से उन्होंने मातृत्व, बाल-मनोविज्ञान, पारिवारिक स्नेह और ग्रामीण जीवन के सहज अनुभवों का अत्यंत सजीव चित्रण किया। गोपियों का प्रेम, विरह और कृष्ण के प्रति अनुराग मानवीय भावनाओं की जटिलता को व्यक्त करता है। ब्रजभाषा की मधुरता, पद-रचना, संगीतात्मकता और दृश्यात्मक बिंब सूरकाव्य की विशिष्ट उपलब्धियाँ हैं। सूरदास ने भक्ति को भावानुभूति की ऐसी कलात्मक अभिव्यक्ति दी जो धार्मिक सीमा से आगे बढ़कर सार्वभौमिक मानवीय अनुभव बन जाती है।

6. मीराबाई: स्त्री-अस्मिता और आध्यात्मिक स्वाधीनता

मीराबाई का काव्य व्यक्तिगत आस्था, प्रेम और आत्मनिर्णय की निर्भीक अभिव्यक्ति है। उन्होंने सामाजिक प्रतिष्ठा, राजपरिवार की मर्यादाओं और स्त्री से अपेक्षित पारंपरिक भूमिकाओं के दबाव के बावजूद कृष्ण को अपना आराध्य चुना। उनके पदों में विरह, समर्पण, आत्मसंघर्ष और आध्यात्मिक स्वतंत्रता की अनुभूति मिलती है। मीरा की काव्यभाषा में राजस्थानी, ब्रज और लोकभाषिक तत्वों का सहज मिश्रण है। आधुनिक स्त्रीवादी पुनर्पाठ में उनका व्यक्तित्व स्त्री की आवाज, आत्म-अधिकार और रूढ़ सामाजिक नियंत्रण से असहमति के प्रतीक के रूप में देखा जाता है; फिर भी उनके काव्य को केवल आधुनिक राजनीतिक श्रेणियों में सीमित करने के बजाय उसके भक्तिपरक और काव्यात्मक संदर्भों सहित समझना चाहिए।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 3, September 2026 Impact Factor: 8.2

भक्तिकालीन कवियों का सामाजिक योगदान

भक्तिकालीन कवियों का सबसे महत्त्वपूर्ण सामाजिक योगदान मनुष्य की गरिमा और आध्यात्मिक अधिकार को जन्म-आधारित ऊँच-नीच से ऊपर स्थापित करना था। कबीर और रैदास ने जातिगत भेदभाव तथा धार्मिक पाखंड की आलोचना की; गुरु नानक ने श्रम, सेवा और साझेदारी को नैतिक जीवन का आधार बनाया। इन कवियों ने धार्मिक अनुभव को पुरोहितीय मध्यस्थता से मुक्त कर व्यक्ति के आत्मानुभव और आचरण से जोड़ा। इससे सामान्य जन, कारीगर, श्रमिक और वंचित समुदायों को साहित्यिक तथा आध्यात्मिक अभिव्यक्ति का स्थान मिला।

भक्तिकाव्य ने सामाजिक संवाद के लिए साझा प्रतीक और लोकभाषिक मंच उपलब्ध कराया। संतों की साखियाँ, पद और भजन मौखिक परंपरा के माध्यम से गाँवों, नगरों, सत्संगों और सामुदायिक आयोजनों में प्रसारित हुए। इस प्रक्रिया ने ज्ञान के प्रसार को अधिक लोकतांत्रिक बनाया। हालांकि भक्तिकालीन समाज में असमानताएँ समाप्त नहीं हुईं और सभी कवियों की सामाजिक दृष्टि समान नहीं थी, फिर भी उनकी रचनाओं ने अन्याय को प्रश्नांकित करने और अधिक मानवीय समाज की कल्पना करने के लिए वैचारिक संसाधन उपलब्ध कराए।

भक्तिकालीन कवियों का सांस्कृतिक योगदान

भक्तिकाव्य ने भारतीय संस्कृति की बहुलतावादी प्रकृति को अभिव्यक्त किया। इसमें वैष्णव, शैव, निर्गुण संत, सूफी और क्षेत्रीय लोकपरंपराओं के बीच अनेक स्तरों पर संवाद दिखाई देता है। कबीर की वाणी में हिंदू और इस्लामी धार्मिक शब्दावली का रचनात्मक प्रयोग मिलता है; गुरु नानक की शिक्षाएँ साझा मानवीयता पर बल देती हैं; तुलसी और सूर ने राम तथा कृष्ण की कथाओं को लोकजीवन के उत्सवों, गायन और नाट्य परंपराओं से जोड़ा।

भक्त कवियों ने लोक-संस्कृति को साहित्यिक प्रतिष्ठा प्रदान की। भजन, कीर्तन, कथा, पदगायन, रामलीला और कृष्णलीला जैसी परंपराओं के विकास तथा प्रसार में भक्तिकाव्य की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही। इन

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 3, September 2026 Impact Factor: 8.2

रचनाओं ने त्योहारों, सामुदायिक स्मृतियों, नैतिक आदर्शों और सांस्कृतिक पहचान को आकार दिया। साथ ही, क्षेत्रीय भाषाओं के माध्यम से स्थानीय जीवनानुभव व्यापक भारतीय सांस्कृतिक संसार का हिस्सा बने। इस सांस्कृतिक योगदान को एकरूपता के रूप में नहीं, बल्कि विविधता के भीतर संवाद और सह-अस्तित्व के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है।

हिंदी साहित्य में भक्तिकालीन कवियों का साहित्यिक योगदान

भक्तिकाल की प्रमुख साहित्यिक उपलब्धि लोकभाषाओं का सशक्त साहित्यिक माध्यम के रूप में विकास है। अवधी में तुलसीदास, ब्रजभाषा में सूरदास और अनेक कृष्णभक्त कवियों, तथा सधुक्कड़ी और लोकमिश्रित भाषा में कबीर ने यह सिद्ध किया कि गंभीर दार्शनिक, आध्यात्मिक और भावात्मक विषयों की अभिव्यक्ति जनभाषाओं में संभव है। इससे हिंदी की अभिव्यक्ति-क्षमता और पाठक-श्रोता समुदाय का विस्तार हुआ।

शिल्प की दृष्टि से भक्तिकाव्य अत्यंत विविध है। दोहा, साखी, सबद, पद, चौपाई, सोरठा और लोकगीतात्मक छंदों का प्रभावी प्रयोग हुआ। संत कवियों ने प्रतीक, रूपक, विरोधाभास, व्यंग्य और उलटबाँसी से जटिल विचारों को संक्षिप्त एवं स्मरणीय बनाया। सगुण कवियों ने आख्यान, संवाद, प्रकृति-चित्रण, चरित्र-निर्माण, रस और अलंकारों के माध्यम से काव्य को कलात्मक ऊँचाई दी। संगीतात्मकता और मौखिक प्रस्तुति ने इन रचनाओं को पाठ्य साहित्य के साथ-साथ प्रदर्शनकारी और सामुदायिक कला का रूप भी प्रदान किया।

भक्तिकालीन साहित्य ने हिंदी की बाद की काव्यधाराओं को गहरे रूप में प्रभावित किया। लोकभाषा, मानवीय संवेदना, सामाजिक आलोचना, प्रेम और नैतिक प्रश्नों की परंपरा आधुनिक हिंदी कविता तथा आलोचना में भी नए रूपों में दिखाई देती है। भक्त कवियों की रचनाएँ आज पाठ, गायन, रंगमंच, लोकमाध्यम और डिजिटल मंचों पर पुनर्प्रस्तुत की जा रही हैं, जिससे उनकी साहित्यिक जीवंतता बनी हुई है।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 3, September 2026 Impact Factor: 8.2

समकालीन संदर्भ में भक्तिकाव्य की प्रासंगिकता

समकालीन समाज में जातिगत भेदभाव, धार्मिक ध्रुवीकरण, सामाजिक असमानता और लैंगिक अन्याय जैसी चुनौतियाँ मौजूद हैं। ऐसे संदर्भ में कबीर की विवेकशीलता, रैदास की समतामूलक कल्पना, गुरु नानक की सेवा-भावना, मीरा की आत्मस्वतंत्रता तथा तुलसी और सूर की लोकाभिमुख संवेदना नए विमर्शों को प्रेरित कर सकती है। भक्तिकाव्य का महत्त्व केवल अतीत की सांस्कृतिक धरोहर होने में नहीं, बल्कि वर्तमान के नैतिक और सामाजिक प्रश्नों से संवाद करने की क्षमता में भी है।

डिजिटल माध्यमों ने भक्तिकाव्य के प्रसार के नए अवसर उपलब्ध कराए हैं। ऑनलाइन पाठ, संगीत, व्याख्यान और डिजिटल अभिलेखागार के माध्यम से विभिन्न भाषिक समुदायों तक यह साहित्य पहुँच रहा है। साथ ही, पाठ-भेद, प्रामाणिकता, संदर्भहीन उद्धरण और कवियों के विचारों के सरलीकरण जैसी चुनौतियाँ भी हैं। इसलिए भक्तिकाव्य के आधुनिक उपयोग में आलोचनात्मक अध्ययन, ऐतिहासिक संदर्भ और विश्वसनीय पाठ-संपादन को महत्त्व देना आवश्यक है।

निष्कर्ष

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि हिंदी साहित्य के भक्तिकालीन कवियों ने सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक तीनों स्तरों पर स्थायी योगदान दिया। सामाजिक स्तर पर उन्होंने जाति-आधारित ऊँच-नीच, धार्मिक आडंबर और मानवीय विभाजन पर प्रश्न उठाए तथा समानता, श्रम, सेवा और मानव-मर्यादा को महत्त्व दिया। सांस्कृतिक स्तर पर उन्होंने विविध धार्मिक और क्षेत्रीय परंपराओं के बीच संवाद स्थापित किया तथा लोकगीत, भजन, कथा और सामुदायिक उत्सवों को समृद्ध किया। साहित्यिक स्तर पर लोकभाषाओं को प्रतिष्ठा, नए काव्यरूपों को विस्तार और मानवीय अनुभवों को व्यापक अभिव्यक्ति मिली। कबीर, रैदास और गुरु नानक की वाणी सामाजिक विवेक और समता की चेतना जगाती है; तुलसीदास का काव्य लोकमंगल और मर्यादा के आदर्शों को सामने रखता है; सूरदास भाव-सौंदर्य और मनोवैज्ञानिक सूक्ष्मता के अप्रतिम उदाहरण प्रस्तुत करते हैं; मीराबाई का काव्य प्रेम और आध्यात्मिक स्वाधीनता को स्वर

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 3, September 2026 Impact Factor: 8.2

देता है। इन कवियों की दृष्टियों में अंतर और अंतर्विरोध भी हैं, इसलिए उनका अध्ययन आलोचनात्मक तथा ऐतिहासिक संतुलन के साथ किया जाना चाहिए। समग्रतः भक्तिकाल हिंदी साहित्य का ऐसा सृजनात्मक युग है जिसने साहित्य को जनजीवन से जोड़ा और भारतीय समाज को अधिक मानवीय, संवादशील तथा संवेदनशील बनाने की प्रेरणा दी।

संदर्भ सूची

1. चतुर्वेदी, पी. (2012). *भक्ति आंदोलन और हिंदी साहित्य.* लोकभारती प्रकाशन.
2. द्विवेदी, ह. (2013). *हिंदी साहित्य की भूमिका.* राजकमल प्रकाशन.
3. नगेंद्र (सं.). (2014). *हिंदी साहित्य का इतिहास.* मयूर पेपरबैक्स.
4. नामवर सिंह. (2011). *दूसरी परंपरा की खोज.* राजकमल प्रकाशन.
5. शुक्ल, रा. (2015). *हिंदी साहित्य का इतिहास.* नागरी प्रचारिणी सभा.
6. सिंह, ब. (2016). *कबीर: व्यक्तित्व, कृतित्व और सिद्धांत.* विश्वविद्यालय प्रकाशन.
7. सिंह, म. (2018). *भक्तिकालीन साहित्य और सामाजिक चेतना.* वाणी प्रकाशन.
8. हिंदी साहित्य सम्मेलन. (2019). *संत साहित्य की सामाजिक प्रासंगिकता.* हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रकाशन.
9. भारतीय भाषा परिषद. (2020). *मध्यकालीन भक्ति काव्य: भाषा, समाज और संस्कृति.* भारतीय भाषा परिषद.
10. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग. (2021). *हिंदी साहित्य में भक्ति परंपरा: शोध और पुनर्पाठ.* शैक्षिक अध्ययन प्रकाशन.
11. साहित्य अकादेमी. (2022). *भारतीय भक्ति साहित्य की बहुभाषिक परंपरा.* साहित्य अकादेमी.
12. राष्ट्रीय पुस्तक न्यास. (2023). *भक्तिकाव्य: परंपरा और समकालीन संदर्भ.* राष्ट्रीय पुस्तक न्यास.